इलाचंद्र जोशी के उपन्यास "जहाज का पंछी" का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन

सुनीता रानी[1] डॉ. दिग्विजय शर्मा[2]

[1]शोधार्थी [2]प्रोफेसर एवं अध्यक्ष

ओ.पी.जे.एस. विश्वविद्यालय

हिन्दी विभाग

ईमेल आईडी– ravi.sdy10@gmail.com

सारांश

इलाचंद्र जोशी के उपन्यास 'जहाज का पंछी' का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन करते समय, हम प्रमुख चरित्र के आत्म–अन्वेषण और उनके अंतर्निहित भावनाओं का अध्ययन कर सकते हैं। नायक का आत्म–प्रतिष्ठान, उसके सपनों और उत्कृष्टता की प्रेरणा, और उसकी आत्म–समर्पण भावना उपन्यास के माध्यम से प्रकट होती हैं। 'जहाज का पंछी' में जीवन के सफलता और हानि के प्रति एक नए दृष्टिकोण का परिचय होता है, जिसमें स्वयं को पहचानने और अपनी मानवीय जिम्मेदारियों को समझने की भावना सामंजस्यपूर्णता से मिलती है। उपन्यास अद्वितीय चरित्रों और गहरी भावनाओं के माध्यम से आत्मा की खोज में एक साहित्यिक यात्रा प्रस्तुत करता है, जो पाठकों को जीवन की सार्थकता और महत्वपूर्णता के प्रति विचार करने पर विचार करने के लिए प्रेरित करता है।

उपन्यास आधुनिक गद्य की एक कथात्मक विधा है। जिसका जन्म अठारहवी शताब्दी में पश्चिम में पूँजीवाद व मध्यवर्ग के उदय के साथ हुआ। उपन्यास का संधि विच्छेद उपन्यास है, उप अर्थात् निकट तथा न्यास' अर्थात् थाती । इस आधार पर उपन्यास का अर्थ हुआ वह रचना जो सामाजिक जीवन के अत्यंत निकट हो। उपन्यास को 'आधुनिक युग का महाकाव्य' भी कहते हैं क्योंकि उपन्यास सामाजिक जीवन के भी अत्यंत निकट है।

मध्यकाल का समाज अपनी प्रकृति में सरल था जिसमें सभी लोग ग्रामीण व छोटे समुदाय में रहते थे। उनकी जीवनचर्या, नैतिक मूल्य तथा दृष्टिकोण में गहरी समरूपता थी। ऐसे समाज में लोक–गीत, कहानियों और लोक नाट्य जैसी विधाएँ प्रचलित थीं।

आधुनिक काल के आते ही स्थितियों में परिवर्तन हुआ । विज्ञान तथा वैज्ञानिक क्रांति ने मनुष्य की अलौकिक आस्थाओं को कमजोर बना दिया। औद्योगीकरण तथा पूंजीवाद की वजह से तेजी से नगरों का विकास हुआ और गाँवों के असख्त्य लोग रोजगार की तलाश में शहर पहुँचे। यहीं से मध्यवर्ग का विकास हुआ। यह वर्ग न तो मालिक की तरह अमौर था न ही मजदूरों की तरह गरीब और दुर्दशाग्रस्त। यह वर्ग अपनी ग्रामीण जड़ों से कट चुका था

और शहर में भावनात्मक अकेलेपन तथा मनोरंजन के अभाव से पीड़ित था। इस वर्ग के अकेलेपन को दूर करने के लिए नई विधा की जरुरत थी जिसमें कल्पनाएँ नहीं यथार्थ हो, जिसका आस्वादन अकेले किया जा सके। चूँकि प्रिंटिंग प्रेस का आविष्कार हो चुका था और यह वर्ग शिक्षित होने के कारण पाठ्य विधा का आस्वादन कर सकता था, इसलिए इसके खालीपन को भरने के लिए उपन्यास का जन्म हुआ।

भारत के इतिहास से भी उपन्यास का जन्म प्रायः इसी प्रकार हुआ। भारत में अंग्रेजों ने जिस नई प्रशासनिक व्यवस्था की स्थापना की, नए ढंग की शिक्षा का प्रसार किया, नई तरह की अर्थव्यवस्था शुरू की, उन सबसे मध्य वर्ग का विस्तार हुआ।

शुरुआती उपन्यास (पश्चिम में भी और भारत में भी) जासूसी और काल्पनिक किस्म के थे जिनमेंरोमांच का तत्त्व केन्द्र में था। जन्म के कुछ ही समय बाद उपन्यास का यथार्थवाद से संबंध हो गया।

1882 ई. में लाला श्रीनिवास दास द्वारा रचित परीक्षा गुरु हिंदी का पहला उपन्यास है।

हिंदी उपन्यास के विकास के इतिहास को तीन चरणों में विभक्त किया जाता है–

(1) प्रेमचंद पूर्व उपन्यास (1882 ई. – 1916 ई.) प्रेमचंद पूर्व युग के उपन्यास सुधारवादी या नैतिक उपदेशात्मक, मनोरंजनपरक व ऐतिहासिक विषयवस्तु पर केन्द्रित थे।

(2) प्रेमचंद युगीन उपन्यास (1916 ई. – 1936 ई.) प्रेमचंद युगीन उपन्यास हिंदी उपन्यास के इतिहास में – युगांतकारी घटना है। अभी तक के उपन्यास औपन्यासिक तत्त्वों और यथार्थवादी दृष्टिकोण के नजरिए से अविकसित थे। प्रेमचंद ने सिर्फ 20 वर्षों के जीवनकाल में हिंदी उपन्यास परंपरा में आज परिवर्तन किया। प्रेमचंद की सबसे महानतम रचना गोदान, जिसे भारतीय जीवन का महाकाव्य भी कहा जाता है।

(3) प्रेमचंद पश्चात युग (1936– अद्यतन) प्रेमचंद के बाद भारतीय समाज की प्रकृति में तीव्र व व्यापक परिवर्तन हुए जिसके कारण उपन्यासों की दुनिया भी तेजी से बदली हिंदी उपन्यास ने में हुए। परिवर्तनी के परिपेक्ष्य में समाज के जीवत चित्र प्रस्तुत किए जिन्हें कई वर्षों में विभाजित किया जा सकता है, जैसे () माक्सवादी, समाजवादी या प्रगतिवादी उपन्यास (पप) सामाजिक यथार्थ के उपन्यास (आंचलिक उपन्यास (पअ)) ऐतिहासिक पौराणिक उपन्यास (अ) नया उपन्यास (क) आधुनिक भवबोध की धारा ६ महानगरीय उपन्यास की धारा (ख) यौन चेतना के उपन्यास (ग) महिला लेखन के उपन्यास (अप) समकालीन उपन्यास– (क) सूचना क्रांति से संबद्ध उपन्यास (ख) उत्तर आधुनिकता से संबद्ध उपन्यास (ग) भूमंडलीकरण से

संबद्ध उपन्यास (प) सांप्रदायिकता से संबद्ध उपन्यास (3) वृद्धावस्था से संबद्ध उपन्यास (घ) दलित विमर्श से संबद्ध उपन्यास (3) स्त्री विमर्श से संबद्ध उपन्यास (ज) इतिहास की पुनर्व्याख्या से संबद्ध उपन्यास (इइ) आतंकवाद व अन्य राजनीतिक समस्याओं से संबद्ध उपन्यास ।

(4) मनोवैज्ञानिक उपन्यास– 20वी सदी की शुरुआत मे सिग्मंड फ्रायड ने थामस एडलर तथा काले रंग के साथ मिलकर मनोविश्लेषणवाद प्रस्तुत किया जिसने सारी दुनिया को वैचारिक तौर पर प्रभावित किया। इस सिद्धांत के अनुसार व्यक्ति के यथार्थ की पहचान उसके चेतन से नहीं अचेतन मन से होती है। मनोवैज्ञानिक उपन्यास व्यक्ति के मन की तहाँ में झांककर नैतिक सिद्धांतों की समीक्षा करते हैं। मनोविज्ञान मस्तिष्क के व्यवस्थित तथा अनुशासित प्रयोग का पक्षधर है। विज्ञान जहाँ मनुष्य की बाहरी रूपाकृति को बतलाकर संतोष कर लेता है, वहाँ पर मनोविज्ञान इस बाहरी रुपाकृति के पीछे काम करने वाली मनाशक्तियों को देखने की चेष्टा करेगा।

आधुनिक मनोविज्ञान ने मनुष्य के इस उध को उसकी जटिलता को स्पष्ट कर दिया है और उसकी विचित्रता की और हमारा ध्यान आकर्षित किया है। उसने बतलाया है कि मनोविज्ञान के क्षेत्र में कत्रता नइरमबजद्ध तथा कर्म वरमबजद्वए अन्तर तथा वाह्य का विभेद नहीं रह जाता।

मनोवैज्ञानिक उपन्यास में बहिर्जगत के स्थान पर अंतर्जगत कथावस्तु के केन्द्र में स्थापित हो जाता है। पात्रों की संख्या सीमित होती है किन्तु पात्र के आंतरिक व्यक्तित्व का उद्घाटन अत्यंत सूक्ष्म और बहुआयामी तरीके से होता है। भाषा प्रतीकात्मक हो जाती है। घटनाएं बेहद विरल होती हैं क्योंकि घटनाओं से ज्यादा महत्त्व चितन, मनन, मंथन और विश्लेषण का है।

हिंदी साहित्य के प्रमुख मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकार जैनेन्द्र, अज्ञेय, डा. देवराज व इलाचंद्र जोशीआदि हैं।

इलाचंद्र जोशी के औपन्यासिक चरित्रों का यूरोपीय मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर विश्लेषण करतेहुए समीक्षकों के एक वर्ग ने जहाँ फ्रायड के सिद्धातों से अर्थात् कामग्रंथि से निर्मित बताया है, वहीं दूसरा वर्ग उन्हें एडलर की हीन भावना या हीनता ग्रंथि से प्रभावित बताता है। परन्तु एक तीसरा वर्ग है जो उनको युग के सामूहिक अवर्धतन की विवृत्ति की खोज से प्रभावित बताता है।

जोशी जी के उपन्यासों पर प्रेमचंद का प्रभाव रहा है। जोशी जी ने हिंसा, स्वार्थपरता जैसी पशु प्रवृत्तियों के चित्रण में मनोविज्ञान से सहारा लेकर पशुता के निवारण करने में आदर्शवाद अपनाया है। जोशी जी ने वैज्ञानिक दृष्टि से नागरिक परिवेश में पात्रों के अंतरंग चरित्र का विश्लेषण किया।

जोशी जी के उपन्यासों को पढ़कर अनुभव होने लगता है कि उपन्यासकार ने मानव के अन्तर्जगत तथा अध्ययजगत के प्रश्नों को एक साथ मिलाकर रख दिया है। जोशी जी की इस प्रवृत्ति ने उनके उपन्यास 'जहाज पंत्री में सुनिश्चित रूप ग्रहण कर लिया है। यहाँ लेखक पात्र के अन्तर्जगत का अध्ययन सूक्ष्मता से करता चलता है, किन्तु उसका मुख्य वपय विषय, बाह्य जगत् और उसका संघर्ष हो गया है। इस उपन्यास में बाह्य जगत् को लेखक ने केवल पात्रों के ऊहापोह अथवा भाषणों द्वारा व्यक्त न करके उसे नाटकीय अभिव्यक्ति दी है।

जोशी जी का उपन्यास जहाज का पंछी' का कथानायक समाज द्वारा पीडित, पुलिस द्वारा प्रताडित दीन–हीन व्यक्ति है। वह कलकत्ता की गलियों, सड़कों और पार्कों में 6 फुट लम्बा और 3 फुट चौड़ा आश्रय पाने में असमर्थ रहता है। आश्रय तो दूर की बात रही, समाज के ठेकेदार पूँजीपति और जनता के रक्षक, पुलिस उसे स्वछंदता से तथा घूमने तक नहीं देते। उसकी ईमानदारी की प्रवृत्ति ही उसके लिए सबसे बड़ी शत्रु सिद्ध होती है जो पग–पग पर उसकी दुर्गति कराती है। 'जहाज का पंछी' एक सुशिक्षित, बौद्धिक और संवेदनशील युवक की जीवनयात्रा का चित्रण है। कथानायक स्वयं ही प्रथम पुरुष में अपनी कथा कहता है। वह सुशिक्षित, संवेदनशील युवक है।

आयु लगभग 27 वर्ष की है। वह कलकत्ता नगरी में अपने भरण–पोषण के लिए कोई उपयुक्त कार्य ढूंढने में असमर्थ रहता है। वहाँ के पार्कों, गलियों और सड़कों में भी उसके निवास की समस्या भी हल नहीं होती है। उसे देखने वाले गिरहकट समझते हैं। पुलिस बार बार कभी जेल कभी कचहरी घसीटती है। इस प्रकार के कष्टमय जीवन से उसकी शारीरिक और मानसिक स्थिति बिगड़ती जाती है। ऐसी विकटतम परिस्थितियों से जूझते हुए भी उसमें जीने की अमित साध है। समाज उसके आंतरिक गुणों की अवहेलना कर बाहरी वेशभूषा को देखकर ही उसे गिरहकट और चोर समझ बैठता है, और पुलिस उसे आवारा घूमने के अपराध में मारती है, पीटती है और बेहोश बना देती है। बेहोशी की दशा में सरकारी अस्पताल में भर्ती कर देती है। वहाँ प्यारे नाम के धोनी से उसका परिचय तथा मित्रता होती है और उसे अनुभव होता है कि अस्पताल के डाक्टरों और नसों में सहानुभूति का अभाव है जिसे वह समाज का कठोर अंग मानता है। वहाँ से निकलने के बाद फिर अपनी ही पूर्व स्थिति में कलकत्ता की व्यस्त सड़कों और गलियों में आवारा भटकने लगता है। निरंतर प्रयत्न पर भी उसे कोई काम

नहीं मिलता। युग की परिस्थितियां उसके मन को क्षुब्ध और विकल बनाये रखती है। एक दिन नौकरी की खोज में भटकते हुए एक जहाज मै पहुँच जाता है। वहाँ ज्योतिषी बन बैठता है और फिर आवारा और गिरहकट के रुप में पकड़ा जाता है। वह स्वयं भूखा रहना चाहता है परंतु दूसरों को भूखा नहीं देख सकता, इसलिए जो कुछ भी धन ज्योतिषी बन प्राप्त किया था वह उदार हृदय व्यक्ति अपनी उस संपूर्ण पूँजी को बाँट देता है। इसके बाद वह मजीद मल्लाह और करीम चाचा के संपर्क में आता है। जो मानवता का सच्चा प्रतीक है। करीम चाचा का पहलवानों का अखाड़ा है। करीम चाचा के पास वह एक असहाय लड़की को पढ़ाने का काम करता है। करीम चाचा के संरक्षण में उसके शरीर की काया पलट जाती परन्तु जब उसे ऐसा प्रतीत होने लगता है कि अखाड़े के कुछ लोगों की धारणा उसके प्रति अप्रिय है, तो उसके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है और करोम चाचा को भी छोड़कर प्यारे धोबी के पास 20 रुपये महीने की नौकरी कर लेता है जिससे उसका अस्पताल में परिचय हुआ था। वहाँ वह धोबियों की गंदी बस्ती में चीटियाँ, खटमली, मच्छरों के फील्ड का स्वाद लेता है। संयोगवश धोबी की बालविधवा लड़की बेला उससे प्रेम–सा करने लगती है। और इस स्नेह की गंध धोबी मिल जाती है और जैसे उडि जहाज को पछी फिर जहाज पर आवे की हालत हो जाती है। वह उस महानगरी की स्वार्थपूर्ण भीड़ में भटकने लगता है। जितना धन उसके पास बचा था, अपने उदार स्वभाव के कारण वह सब एक अभागिन को दे देता है। संयोगवश उसे भादुड़ी महाशय इण्ण् ण के पास रसोइये का काम मिल जाता है, जहाँ से एक बार वह पहले ठुकराया गया था। चाचा करीम का सिखाया हुआ पाकशास्त्र का ज्ञान भादुड़ी परिवार को मोहित कर देता है। परन्तु उसकी साहित्यिक अभिरुचि एवं उसका ज्ञान एक नौकर के रूप में उसके लिए अभिशाप सिद्ध होता है। फलस्वरूप साम्यवादी होने के आरोप में उसे नौकरी छोड़नी पड़ती है और वह फिर नगर की गलियों की धूल छानने के लिए विवश हो जाता है। तदन्तर उसे मिस साइमन के चकले में रसोइये का काम मिल जाता है। मिस साइमन विभिन्न देशों की असहाय लड़कियों से पेशा करवाकर धन कमाती है।

उन लड़कियों के निःसहाय, विषादपूर्ण और विवशतापूर्ण जीवन के कारण नायक विद्रोह के लिए विवश हो जाता है। साइमन की मृत्यु के पश्चात वह अपने एक साथी के सहयोग से उन निर्बल लड़कियों का उद्धार करके फिर अपनी पूर्व स्थिति में आ जाता है। फिर कलकत्ता की गलियों की धूल छानता हुआ और परिस्थितियों के चक्कर में पिसता हुआ काम की खोज में एक सम्पन्न परन्तु अकेली महिला के द्वार खटखटाता है। महिला नौकरी देने के बदले अपना स्नेह देती है। मानों लीला वर्षों से इसी की प्रतीक्षा में कौमार्य व्रत लिए हुए है। अपने को सोने के पिंजरे में बंद समझकर वह चुपचाप वहाँ से खिसक जाता है और के मानसिक रोगों के अस्पताल में पहुँचकर वहाँ के रोगों का मूल कारण जानने का प्रयत्न करता है।

पागलखाने के समीप एक बाबा की झोपड़ी में रहता है। लीला उसके चले जाने पर बेचौन हो उठती है। संयोगवश जब कथानायक को पता चलता है तो वह वहाँ आकर उसके जीवन उद्देश्य को स्वीकार कर पुनः अपने सुदृढ़ स्नेह से बाँधकर कलकत्ता ले आती है और दोनों दम्पत्ति के रूप में जीवन व्यतीत करते हैं।

अम्ला, सुजाता और जुलेखा के रुग्ण मन, उसके अन्तर पर अमिट छाप छोड़ते हैं। उपन्यासकार ने चकले के प्रसंग को लाकर समाज का पर्दाफाश किया है, साथ ही साथ समाधान भी प्रस्तुत किया है। प्रसंग स्वाभाविक एवं आवश्यक है।

जोशी के पहले के उपन्यासों के कथानायक काम–कुंठाग्रस्त अत्यधिक आत्मपरायण, प्रतिहिंसा प्रिय, शंकालु, पलायन प्रिय, आत्मनिष्ठ तथा मानसिक रोगों के शिकार हैं। 'जहाज का पंछी' का नायक उनसे भिन्न है। इसके भीतर सामाजिक विकृतियों से उद्धृत व्यक्ति पीड़ा के प्रति गहरी सहानुभूति है और सामूहिक पीहर केआगे वह अपनी कठिनाईयों को कुछ महत्त्व नहीं देता। चाहे उसे निराहार क्यों न रहना पड़े।

उपन्यासकार ने कथानायक को मानसिक ग्रन्थिजाल से निकाल कर उसे समाज अध्येता के रूप में चित्रित किया है जो अपनी स्मृति और अनुभूति को पाठको के सम्मुख रखता है।

साधारणतः जोशी जी के सभी उपन्यासों के कथानकों का शिथिल वस्तुविधान होता है और मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों में ऐसा होना स्वाभाविक भी है। जोशी जी की यह कृति उनकी औपन्यासिक कला की चरम सीमा है। इस उपन्यास का वस्तुविधान इतना शिथिल है कि किसी भी घटना का कोई भी सूत्र दूसरी घटना से स्वाभाविक रूप से मेल नहीं खाता। कथानायक ही उन घटनाओं को जोड़ता है। फिर भी घटनाएँ अपने 'आप में पूर्ण हैं और महत्त्वपूर्ण भी है। अस्पताल से लेकर पागलखाने में भेंट हुए सन्यासी तक सभी पात्र एक सौमित अवधि तक नायक के संसर्ग में आते हैं और उसे नव अनुभूतियों से परिचित कराकर कथा को आगे धकेलते हुए लुप्त हो जाते हैं।

कथानायक कलकत्ते की विशाल भीड़–भाड़ पूर्ण नगरी में गली–2 का चक्कर काटता है। धूल भरे पार्कों में निरुद्देश्य घूमता है। पेट की ज्वाला को तो वह दो आने के चिउड़े और पानी से शान्त कर लेता है परन्तु आश्रय के लिए 6 फीट लम्बी और 3 फीट चौड़ी जगह उसे नहीं मिलती। खुले आकाश की छाया में वह पार्को में लेटना चाहता है। शिक्षित वर्ग उसे गिरहकट और चोर आदि समझकर पुलिस के हवाले करते हैं। नित्य प्रति पुलिस से मुठभेड

होती है और एक बार पुलिस द्वारा बेहोश किए जाने पर उसे अस्पताल में भर्ती भी होना पड़ता है।

''आज का मानव न स्वयं अपने को समझ पा रहा है, न दूसरे को समझना चाहता है। प्रत्येक सम्पन्न व्यक्ति बाहर से भरा–पूरा रहने पर भी अपने निकट संकीर्ण अंह में डूबा रहने के कारण अपने भीतर किसी एक अनन्त हाहाकर भरे अस्पष्ट अभाव का अनुभव कर रहा है और प्रत्येक अकिंचन व्यक्ति सारे जीवन को ही अभावमय, अर्थहीन और अनावश्यक मानकर अब तक सामर्थ्य है उसके भार को किसी तरह ढोता चला जा रहा है। आज का व्यक्तिवादी दृष्टिकोण उनके जीवन को विकृत एवं पीडित बनाने का कारण है। नायक इस दृष्टिकोण के प्रति विद्रोह करता हुआ अपनी सामाजिक चेतना का परिचय देता है..... बीच वाले व्यक्ति प्रतिक्षण जीवन और मृत्यु के झूले में झूलते हुए परस्पर विरोधी परिस्थितियों के क्रूर परिहास के शिकार बन रहे हैं। सर्वत्र अय, संशय, अनास्था और अविश्वास का बोलबाला है। सब कहीं झूठ और ढोंग का राज्य छाया हुआ है। सब और जीवन अरक्षित और अव्यवस्थित है। यह आज की पूँजीवादी तथा व्यक्तिवादी युग चेतना का परिणाम है। नायक के जीवन की अनुभूति से यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है कि आज का व्यक्तिवादी दृष्टिकोण उनके जीवन को विकृत एवं पीड़ित बनाने का कारण है। नायक इस दृष्टिकोण के प्रति विद्रोह करता हुआ अपनी सामाजिक चेतना का परिचय देता है।

अस्पताल में भी वह कटु अनुभव प्राप्त करता है कि अस्पताल भी अन्य विभागों व संस्थाओं के समान अष्टाचार व अनाचार के केन्द्र है, जहाँ मरीजों की सेवा लगन से नहीं होती। अपितु केवल 'इयूटी' पूरी करने के निमित्त मात्र डाक्टर व नर्स इधर से उधर दौड़ लगाते हैं। रोगियों को उचित भोजन नहीं दिया जाता तथा दूध में पानी की इतनी अधिक मात्रा मिलाई जाती है कि दूध केवल सफेद पानी ही रह जाता है। वहाँ वातावरण इतना नीरस, अशान्त और सहानुभूतिहीन होता है कि स्वस्थ व्यक्ति भी अस्वस्थ हो जाता है। परन्तु उसे केवल रहने के लिए आश्रय मिल गया है इसलिए वह वहाँ से निकलना नहीं चाहता। लेकिन अस्पताल से छूटने के बाद फिर वही अपनी पूर्ववत् स्थिति पर आ जाता है।

अपनी बेकारी की हालत में वह नौकरी के लिए इधर–उधर चक्कर काटता है। खगेन्द्र मोहन भादुड़ी एम. एल. ए. के बंगले पर जाकर आधुनिक दीनबन्धु जनता के सेवक नेता से कुछ काम की याचना करता है, परन्तु महाशय से उसे भत्रसना ही नहीं मिलती, बल्कि वह अपने बंगले के पठान चौकीदार से उसे बलपूर्वक बाहर करवा देता है।

एक जहाज पर चढ़कर वह ज्योतिषी का बहाना बनाकर दो विदेशी यात्रियों का हाथ देखता है और उनसे कुछ धन की प्राप्ति भी होती है, परन्तु इसके बाद वहाँ भी उसकी दुर्दशा होती है और गिरहकट एवं चोर होने का लगाकर उसे बाहर निकाला जाता है।

किसी प्रकार करीम चाचा के सम्पर्क में आता है। करीम चाचा का पहलवानों का अखाड़ा है। वहाँ एक असहाय लड़की को पढ़ाने का काम करता है। करीम चाचा के पास रहकर उसके स्वास्थ्य की भी पर्याप्त वृद्धि होती है। उसकी जीर्ण काया तब माँसपेशियों से ढक जाती है और अब वह स्वस्थ पुरुष सा दिखाई देता है। परन्तु जब परिस्थिति को वहाँ भी अनुकूल नहीं पाता तो वहाँ से भी भाग निकल कर प्यारे धोबी के पास मुनीम का काम कर लेता है परन्तु बालविधवा कन्या बेला की और से प्रदर्शित प्रेमभाव के कारण उसे वहाँ से भी जाना पड़ता है। इस बार उसे भादुड़ी महाशय के यहाँ रसोइये का काम मिल जाता है। करीम चाचा की सिखाई हुई पाक–कला के कारण सभी परिवार के सदस्य प्रसन्न रहते हैं परन्तु एक बार एक साधारण कुक के मुँह से रवीन्द्रनाथ ठाकुर के दर्शन की चर्चा सुनकर उस पर कम्युनिस्ट होने का आरोप लगता है और वह निकाल दिया जाता है।

फिर कथानायक कलकत्ता की भीड़–भाड़ से पूर्ण गलियों में घुलमिल जाता है और उसे मिस साइमन के चकले में खानसामा का काम मिलता है। मिस साइमन के चकले में विश्व के विभिन्न देशों की पन्द्रह लड़कियाँ हैं, जिन्हें परिस्थिति की विवशता में पुलिस के भय, समाज की घृणा ने बाँध रखा है। वेश्याओं के जीवन की करुण 'गाथा और मिस साइमन के पाशविक व्यवहार का चित्रण जोशी जी ने मर्मस्पर्शी ढंग से किया है। मिस साइमन के व्यापार में, चोखे दामों में बिकता है, मानवता रोती है और दानवता खिलखिलाती है। कथानक ही वहाँ उद्धारक के रूप में कार्य करता है। उसी के परिश्रम व मानव प्रेम के फलस्वरूप वह वेश्यालय देवालय के रूप में परिणत हो जाता है। इस बार भी कथानायक का सामना पुलिस से होता है, परन्तु पुलिस पराजित होकर चली जाती है।

''जोशी जी ने जहाज का पछी उपन्यास में समाज का सफल चित्रण किया है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि जोशी जी की उपन्यास कला का विकास अन्तर्जगत् से बहिर्जगत की और संकीर्ण वैयक्तिकता से व्यापक सामाजिकता की ओर हुआ है।

लीला के पास उसे स्नेह और आश्रय मिलता है, परन्तु वहाँ से भी भाग कर राँची के पागलखाने में चला जाता है जहाँ पर मानसिक रोगियों के रोग का मूल कारण बताते हुए कहता है ''स्त्री रोगिनियों अधिकतर दाम्पत्य जीवन सम्बन्धी कारणों से मानसिक संतुलन खोए बैठी है। वहाँ पुरुष रोगी अधिकांश आर्थिक कारणों से दिमाग की बीमारी से पीड़ित दिखाई देते हैं।

सत्ताईस वर्षीय संकोचशील, जीर्णकाय, उदारचित्त एवं सत्यनिष्ठ फक्कड़ युवक कथा का नायक है। सम्पूर्ण उपन्यास में उसका व्यक्तित्त्व छाया हुआ है। बाह्य जीवन के साथ–साथ अन्तर्जीवन की झॉकी हमें स्थान–2 पर मिलती है। वह जीवन की साधारणतम आवश्यकताओं की पूर्ति आवास, भोजन एवं वस्त्र से वंचित रहता है। पार्क में सूकीदा (सुभीता) पाकर बटुआ नहीं उठाता जो उसके आत्मसम्मान और ईमानदारी का ज्वलन्त उदाहरण है। उसे देखने वाला प्रत्येक व्यक्ति उसके गिरहकट अथवा पेशेवर गुंडा होने का संदेह करता है। अपने उदार चरित्र और जीवन के विषम संघर्षो का विश्लेषण करते हुए वह स्वयं कहता है–

''जिन–2 क्षेत्रों में मैंने सच्ची लगन से काम किया, वहाँ में ठोकरे खाता और ठुकराया जाता रहा। तुच्छ व्यक्तिगत स्वार्थी की तिलांजलि देता हुआ सामाजिक, राष्ट्रीय और सामूहिक हित को ध्यान में रखकर अपनी सीमित समर्थता से भरसक ईमान्दारी को अपनाता हुआ में अवरोधों से निरन्तर लड़ता हुआ जिन नए–नए पथ, नए 2 मोड़ों पर कदम बढ़ाता चला गया वहाँ मैंने सामूहिक विरोध और प्रतिरोध पाया। फिर भी वह आशावाद और आदर्शवाद लिए अपने जीवनपथ पर अग्रसर होता रहता है।

कथानायक में परिष्कृत कोटि का अहं विद्यमान है। वह अस्पताल के बड़े डाक्टर के अमानुषिक व्यवहार और पुलिस के लोमहर्षक अत्याचार की पुनरावृत्ति की धमकी पर लम्बे–2 भाषणों में उन्हें घीर नीच, कायर और नरपिशाच तक कह डालता है। इस प्रकार वह अपने अहं की तृप्ति करता है।

उसकी सूक्ष्म दृष्टि अपने अहं का ही विश्लेषण नहीं करती अपितु सरकारी अफसरों के अहं की भी शल्य चिकित्सा करती है– ''याद रखो, डाक्टर, आज भले ही तुम इन पुलिवालों की सहायता से या स्वयं अपने अधिकार के बल पर किसी व्यक्ति को निःसहाय और निराश्रय समझकर उसे अधिक से अधिक दुर्गतिपूर्ण परिस्थितियों में टकेलकर अपने अहं की, अपने झूठे अधिकार के मद की तृप्ति कर लो, पर यह भूलकर भी न समझना कि आज के युग की हजारों विकृतियों के ताने–बाने से उलझी हुई विषम आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था के शिकार के प्रति स्वयंभू समाजपतियों का यह रूख जनता द्वारा बराबर इसी तरह उपेक्षित रहता चला जाएगा। अपने अह के ही वह महान से महान और भयंकर से भयंकर सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों के आगे नहीं झुकता। करीम चाचा के अड्डे में एक वर्ष तक पूर्ण सुख और सुविधापूर्वक रहने पर उसकी मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति होती है परन्तु उस अड्डे पर एक जवान लड़की खेमी के अपहरण और बलात्कार की कल्पना सात्र से ही वह सब सुख सुविधा को तिलांजलि देकर चला आता है। लीला के यहाँ निठल्ले बैठे–2 रोटी तोड़ना उसे अपने सिद्धान्तों के प्रतिकूल लगता है इसलिए वहाँ से भी भाग जाता है। उसे

अपनी निःसम्बलता, निरुपायता और आवारापन की सर्वाधिक पीड़ा उस समय होती है। जब वह त्रस्त हृदय नारी बेला को असहाय अवस्था में छोड़कर निरुद्देश्य भटकने लगता है। ''मुझे ले चलो। कहीं भी ले चलो।' – बेला के शब्द मर्म को भेदते रहते हैं। इस पर वह स्वयं अपना आत्म विश्लेषण करता हुआ कहता है– ''तुम पुरुषार्थ हीन हो। नपुंसक हो । कायर हो । बड़ी–2 बातें सोचते हो, बड़ी–2 बातें दूसरों को बताते फिरते हो, पर इतनी सी भी शक्ति न तो भीतर से बटोर पाए, न बाहर से संगठित कर पाए कि असंख्य पीडितों और दलितों की अवस्था में सुधार तो क्या, एक अदना सी असहाय नारी आत्मा का उद्धार कर सकते। इतनी सी बात के लिए भी तुम निपट अक्षम सिद्ध हो रहे हो। धिक्कार है तुम्हारी पराक्रमहीनता पर लानत है तुम्हारे निकम्मेपन पर।'

प्रेमी का रूप उसमें कहीं भी नहीं मिलता। ऐसा प्रतीत होता है कि उसके मन की कोमल रसभरी भावनाएँ जीवन के दारुण अनुभवों के कारण कठोर बन गई हैं। लीला की स्नेहमयी कोमलता उसके अन्तर्मन में प्रवेश करती तो है, परन्तु लीला को अपने सिद्धान्तों के अनुकूल बनाने पर ही उसकी ओर झुकता है।

निष्कर्ष–

इलाचंद्र जोशी सही मायने में एक श्रेष्ठ मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार के रूप में उभरकर हमारे सामनेआए, उनके साहित्य चिंतन में लेखक की मार्मिकता, उनके उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं सुधारवादीपक्ष उनके पात्रों के माध्यम से दिखाई देता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

1. जहाज का पंछी, इलाचन्द्र जोशी, राजकमल प्रकाशन, 1955
2. जहाज का पंछी, इलाचन्द्र जोशी, लोकभारती प्रकाशन, 2008
3. आधुनिक हिंदी कथा साहित्य और मनोविज्ञान, डॉ0 देवराज
4. मनोविश्लेषण, सिग्मंड फ्रायड, अनु, देवेन्द्र कुमार वेदालंकार, द्वितीय संस्करण 1960